शुल्व सूत्र में रेखागणित की शुरुआत

पंडितों और कारीगरों का मिलाजुला प्रयास

रामकृष्ण भट्टाचार्य

कोई भी विज्ञान शून्य में पैदा नहीं हो सकता। विज्ञान की सभी शाखाएं, जिसमें गणित भी शामिल है, किसी समूह की कुछ बुनियादी भौतिक और बौद्धिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अस्तित्व में आती हैं। हम पाषाणयुग के लोगों में धातुविज्ञान की बात नहीं सोच सकते। इसी प्रकार रेखागणित और बीजगणित जैसी गणित की शाखाएं ज़्यादा विकसित समाज से संबंध रखती हैं।

हम हड़प्पा के निवासियों के ज्ञान के सैद्धांतिक पक्ष के बारे में कुछ नहीं जानते; फिर भी हम यह विश्वास कर सकते हैं कि प्राचीन बेबीलोन और मिस्र के समान भारत में भी राजगीर और बढ़इयों का अपना खुद का रेखागणित था जो चीज़ों को बनाते, गढ़ते विकसित हुआ था। रेखागणित के दो मूल तत्व, ईंट बनाना और सरल रेखीय तथा वक्ररेखीय आकृतियां (मुख्यतः बहुभुज और वृत्त) बनाने वाले उपकरण, उत्तर-पश्चिम भारत में 2500 ई.पू. से ही विद्यमान थे।

दूसरा चरण वैदिक लोगों से शुरू होता है जो 1500 ई.पू. के करीब

आए। तथापि, ज़हां तक रेखागणित का संबंध है हम एक नई शुरुआत देखते हैं। कम्पास या स्केल जैसे तैयारशुदा किसी उपकरण के स्थान पर हम बांस के शंकु और रस्सी का टुकड़ा (शुल्व) पाते हैं। (इसे रज्जु भी कहा जाता था)।

वेदियां अलग-अलग आकार की

वैदिक लोगों के रेखागणितीय ज्ञान का पहला प्रमाण 'ब्राह्मण ग्रंथों' में मिलता है, जो वेदों के गद्यात्मक सहयोगी ग्रंथ हैं। वे विभिन्न प्रकार के यज्ञों का वर्णन करते हैं। सोमयाग नामक कर्मकाण्ड के सिलसिले में विशेष प्रकार की वेदियों का निर्माण करना पड़ता था। हवन की वेदियों के सामने खड़े रहकर या बैठकर जब पुरोहित कर्मकाण्ड संपन्न करता था तो मंत्रों का उच्चारण या गायन किया जाता था। ये वेदियां अलग-अलग आकार की ईंटों के द्वारा बनाई जाती थीं।

आज यह एक पहेली जैसा लगता है क्योंकि वैदिक काल के लोग गांवों में रहते थे, उनके मकान मिट्टी और लकड़ी के बनते थे, भट्टी में पकाई ईंटों के नहीं। पर अग्नि वेदी के निर्माण के लिए ईंटें ज़रूरी थीं। यह अनुमान

विविध किस्म की वेदियां

प्रउगचिति: 'त्रिकोण वेदी', प्रउग शब्द का मूल अर्थ 'रथ के डंडे के सामने का हिस्सा' जो आकार में तिकोना होता था।

उभयत: प्रउगचिति: दोनों तरफ तिकोनी वेदी, यानी समचतुर्भुज आकार की।

रथचक्र चिति: रथ या बैलगाड़ी के चक्के के आकार की वेदी, अर्थात आरीयुक्त वृत्त।

परिचाय्य चिति: गोल वेदी।

श्येन (या सुपर्ण) चिति: बाज़ के आकार की वेदी।

कंक चिति: बगुले के आकार की वेदी।

कूर्मचिति: कछुए के आकार की वेदी।

द्रोणचिति: दोने के आकार की वेदी।

श्मशान चिति: चिता के आकार की वेदी।

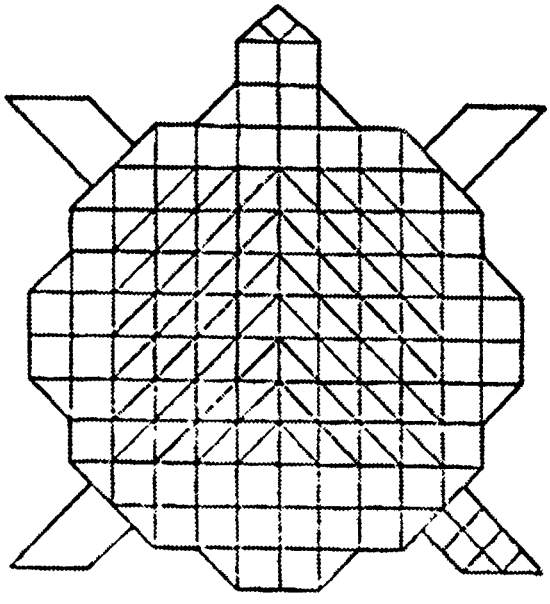

कूर्मचिति: कछुए के आकार की वेदी। बाईं तरफ के चित्र में इस वेदी की एक परत बनाई गई है जिसमें अलग-अलग आकृतियों की ईंटों के इस्तेमाल को दिखाया गया है। नीचे के चित्र में कूर्मचिति के पूरी तरह बन जाने के बाद की स्थिति को प्रदर्शित गया है।

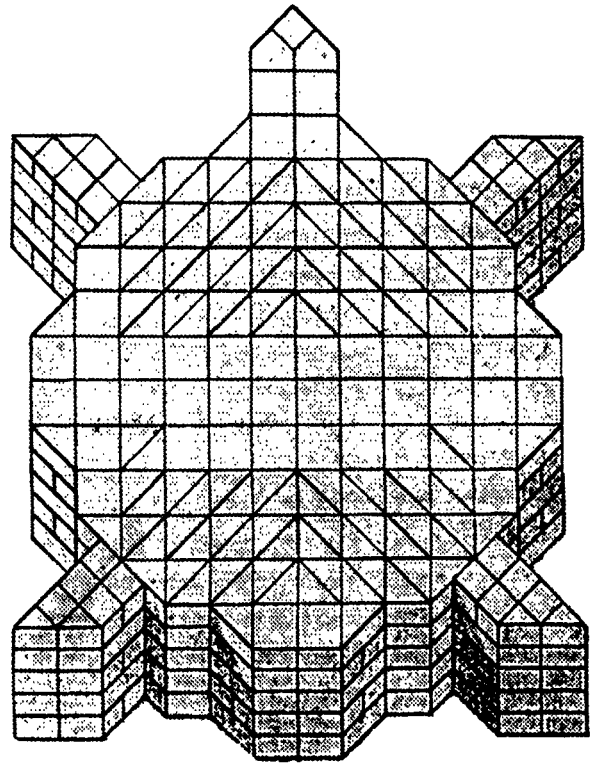

ठीक ही लगता है कि ईंटों का उपयोग पूर्व वैदिक और वैदिक संस्कृति की निरंतरता ज़ाहिर करता है। संभवतः हड़प्पा के पुरोहितों ने इस खास किस्म के वैदिक कर्मकाण्ड में ईंटों के उपयोग का रिवाज शुरू करवाया होगा।[1]

वेदियां भी कई प्रकार की बनाई जाती थीं। कुछ नाम रेखागणितीय अवधारणा के प्रारंभिक सिद्धांत प्रकट करते हैं।

अलग-अलग आकार की ईंटें मिट्टी को पकाकर बनाई जाती थीं। विभिन्न आकार की ईंटों की निश्चित संख्या से एकदम सही आकार बन जाता था। वेदियां सुन्दरता के हिसाब से भी सुरुचिपूर्ण थीं।

ईंटों के इस प्रकार के इस्तेमाल के रिवाज से वैदिक काल के लोगों ने तथाकथित पाइथागोरस के इस सिद्धांत को खोजा कि समकोण त्रिभुज के आधार व लम्बवत भुजा पर बने वर्ग का योग, कर्ण पर बने वर्ग के बराबर होता है।[2] पहली तीन निश्चित संख्याएं जो यह गुण दर्शाती हैं – 3, 4 और

रथचक्र चिति: रथ या बैलगाड़ी के चक्के के आकार की वेदी, अर्थात आर्गयुक्त वृत्त।
पहले चित्र में रथचक्र चिति को बनाते समय की एक परत को दिखाया गया है ताकि इस बात का अंदाज़ लग सके कि अलग-अलग ईंटों का इस्तेमाल किस तरह किया जाता था।
दाहिनी ओर के चित्र में रथचक्र चिति के बन जाने के बाद का काल्पनिक चित्रण है।

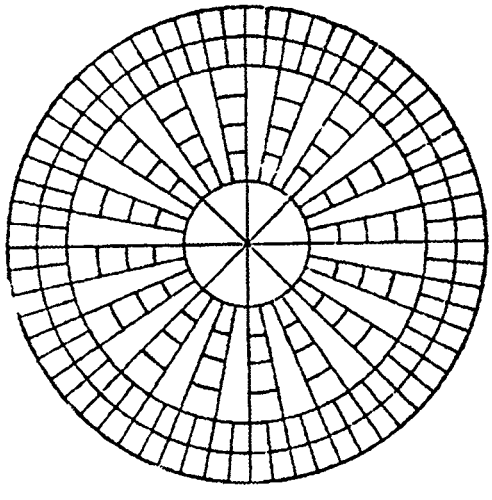

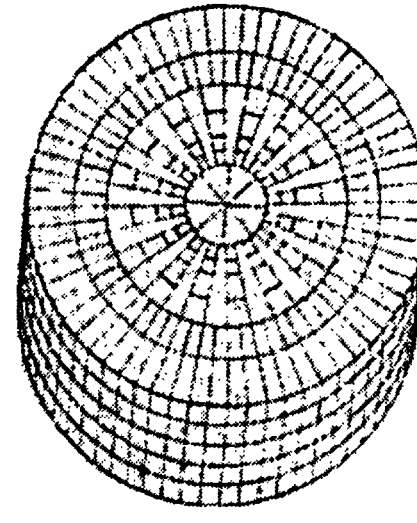

श्मशान चिति - चिता के आकार की वेदी का चित्रण।

उभयत: प्रउगचिति - दो त्रिकोणों मे बनी चतुर्भज वेदी। प्रउग शब्द का मूल अर्थ है 'रथ के डंडे के सामने का हिस्सा' जो आकार में तिकोना होता था।

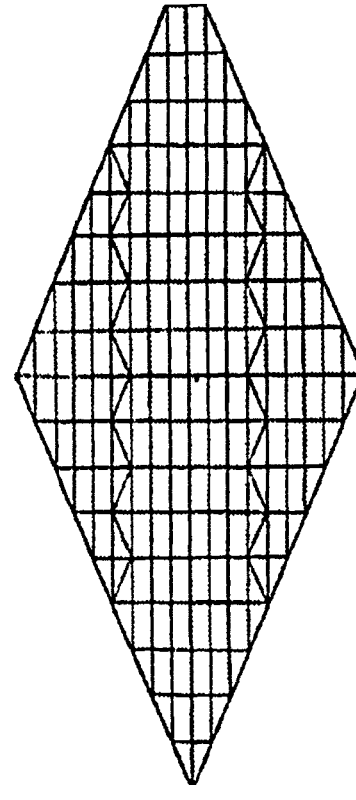

$5\ (3^2 + 4^2 = 5^2)$ और दूसरे ऐसे अंकों के रूप में (5, 12, 13; 7, 24, 25; 40, 96, 104, आदि) वेदियों का आकार बताने वाली इबारत में इस साध्य का बुनियादी विचार मिलता है।

ये नियम अत्यंत संक्षिप्त सूत्रों के रूप में बनाए गए हैं। ये कृतियां 'शुल्व सूत्र' के नाम से जानी जाती हैं जो कि श्रौत सूत्र का हिस्सा है।

'शुल्वसूत्र विभिन्न पुरोहित परिवारों के धार्मिक ग्रंथों का हिस्सा बन गए। हमारे पास बोधायन शुल्व सूत्र जैसे ग्रंथ हैं, जो बोधायन श्रौत सूत्र का हिस्सा है। इसी प्रकार आपस्तंभ, कात्यायन और मानव शुल्व सूत्र हैं। हमें कुल सात शुल्व ग्रंथों की जानकारी है लेकिन ऊपर जिन चार का ज़िक्र किया गया है उन्हें छोड़कर बाकी ग्रंथ

या तो दोहराव हैं या फिर खास उपयोगी नहीं हैं।

रेखागणित का उद्गम: एक बहस

शुल्व ग्रंथों में उल्लेखित रेखागणित का विस्तार से अध्ययन करने के पहले हम एक मुद्दे को तय करना चाहते हैं। यदि शुल्वसूत्र रेखागणित का स्रोतग्रंथ माना जाए तो क्या इससे यह सिद्ध होता है कि धर्म या जादू ने भारत में रेखागणित के जन्म (या कहें कि पुनर्जन्म) में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी? एक प्रसिद्ध जर्मन भारतविद जॉर्ज थिबाट, जिन्होंने शुल्व का विस्तृत विवरण सन् 1875 में लिखा, बताते हैं कि:

"यह सबको पता है कि भारतीय जीवन और उसकी सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाएं हमेशा ही धर्म के प्रभाव में रही हैं। पर जब हम ज्ञान के उन क्षेत्रों के उद्गम का कारण जानना चाहते हैं जिसे भारतीयों ने इतनी उल्लेखनीय सफलता से विकसित किया है, तो हम उसे धार्मिक विश्वासों और उपासना में खोजने पर विवश होते हैं।"[3]

उन्होंने अपने मत के समर्थन में रेखागणित का उदाहरण दिया।

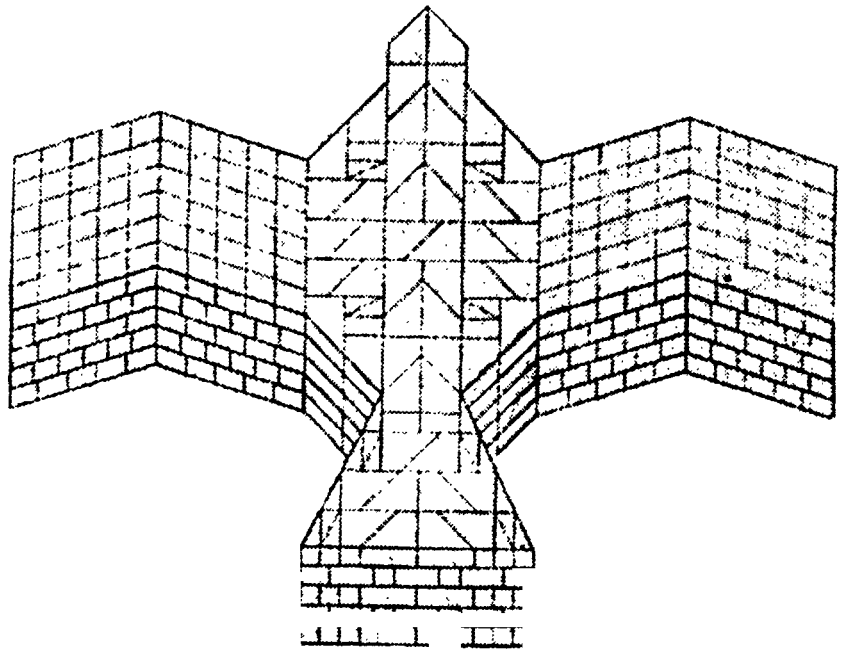

श्येन (या सुपर्ण) चिति: बाज़ के आकार की वेदी।

हाल ही में, संस्कृत के एक विद्वान और दार्शनिक फ्रिट्स स्टाल ने लॉर्ड रेग्लान का मत पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। 1949 में लॉर्ड रेग्लान ने (स्टाल के अनुसार) 'एकदम मौलिक और नया' दावा किया, जो इस प्रकार है:

"इस बात की बहुत संभावना है कि उन खास खोजों, जिन पर हमारी सभ्यता आधारित है, के उद्गम को फारस की खाड़ी के शीर्ष के पास खोजा जा सकता है। वहां जो प्रमाण मिले हैं उनसे पता चलता है कि इन्हें होशियार पुरोहितों ने धार्मिक कर्मकाण्डों को सुविधाजनक रूप से संपन्न करने के लिए बनाया था।"

"संभवतः बलि देने में सुविधा हो इसके लिए जानवरों को पहले पालतू बनाया गया और यह भी संभव है कि हल का पहले-पहल इस्तेमाल ज़मीन को प्रतीक के रूप में उपजाऊ बनाने के लिए किया गया; पहला पहिया शायद सूरज को अपने रास्ते पर रखने का एक तरीका रहा होगा; और धातु का काम स्वर्ण में सूर्य की प्रतिकृति बनाने से शुरू हुआ होगा; पहले धनुष और बाण ने दूर खड़े दुश्मन को प्रतीकात्मक रूप में नष्ट करके विजय को सुनिश्चित किया होगा; मृत शरीर को सुरक्षित रखने (ममी) से मृत राजा कर्मकांड के लिए जीवित रह पाता था; और पतंग आत्मा को आकाश पहुंचाती थी।"

"इन सभी सुझावों के समर्थन में कुछ प्रमाण तो हैं, और उनका कुल प्रभाव समग्र रूप से इस सिद्धांत को मज़बूत बनाता है। सिद्धांत यह है कि सभ्यता का उदय कर्मकाण्ड से हुआ, हालांकि इस बात को स्थापित करने के लिए और ज़्यादा प्रमाणों की ज़रूरत पडेगी। परन्तु जो वैकल्पिक सिद्धांत हैं उनके समर्थन में कोई प्रमाण नहीं हैं।"[1]

यह सब चाहे जितना भी भरोसे लायक दिखे, खासकर भारत के संबंध में, हम यह बताना चाहेंगे कि भारत में रेखागणित का कर्मकाण्डीय उद्गम एकदम काल्पनिक है और उसका कोई आधार नहीं है। ईंट बनाने की कला मकान बनाने के मकसद से पहले उत्तर-पश्चिम भारत के शहरों में विकसित हुई, जैसा कि 1920 के दशक से किए गए उत्खननों में कितने ही शहरों के अवशेषों से प्रकट होता है। ये सारे शहर वैदिक काल के पहले के थे और उस समय के निवासियों का जीवन बहुत अलग किस्म का था।

दूसरे, खुद शुल्व सूत्रों में हम यह पढ़ते हैं कि शुल्व विशेषज्ञ ऐसा होना चाहिए जो अपने विषय के प्रति समर्पित हो, संख्याओं को भाग देने में माहिर हो, जिसे दूसरों के विषय में रुचि हो और हमेशा कारीगरों और राजगीरों से सीखता हो।

शास्त्र बुद्धया विभागज्ञः
परा शास्त्र कुतूहलाः।
शिल्पिभ्यः स्थपतिभ्यश्च
आददीतामतीः सदा[5]

इस प्रकार ईंटों को एक के ऊपर एक रखने वाले विशेषज्ञ को अन्य कारीगरों से, खासकर दस्तकारों और राजगीरों से सीखते रहना चाहिए।

कारीगर और राजगीर कितने महत्वपूर्ण थे यह महाभारत के आदिपर्व की एक घटना से पता चलता है। जब राजा जनमेजय ने नाग यज्ञ करने का निश्चय किया तो उसने मंत्रों के ज्ञाता ब्राह्मणों से कहा, "मैं उस यज्ञ के लिए तैयारी करूंगा। मुझे वे चीज़ें बताओ जिनकी इसमें ज़रूरत है।" और राजा के ऋत्विजों, श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने, जो वेदों के ज्ञाता और विद्वान थे, शास्त्रों के अनुसार यज्ञ की वेदी के लिए भूमि को नापा।[6]

किन्तु कुछ गड़बड़ हो गई। और नाग यज्ञ शुरू होने के पहले ही यज्ञ के विनाश की चेतावनी मिली। हुआ यह कि जब यज्ञ की वेदी का निर्माण किया जा रहा था तब अत्यन्त चतुर और नींव भरने में कुशल सूत जाति के एक पेशेवर कारीगर, जो पुराणों का अच्छा ज्ञाता था, ने कहा, "जिस भूमि पर और जिस समय यज्ञ की वेदी की नाप की गई, वह बताती है कि यज्ञ पूरा नहीं होगा और ब्राह्मण इसके कारण होंगे।"

यह कहानी खुद एक अंधविश्वास की ओर इशारा करती है इसमें सन्देह नहीं है। पर यह बात ध्यान रखने की है कि ब्राह्मणों ने समय और नाप की गलत गणना कर ली जबकि एक अब्राह्मण यानी एक तथाकथित नीची जाति के व्यक्ति (कौटिल्य अर्थशास्त्र 3.7.28 और मनुस्मृति 10.17 और अन्य के अनुसार सूत एक वर्णसंकर जाति है) ने गलती पकड़ ली और भावी खतरे की भविष्यवाणी कर दी।

इसी प्रकार जब युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ करने की योजना बनाई, तब उसका भाई भीम यज्ञ भूमि तैयार करने और इमारतें बनाने में कई कुशल लोगों के साथ गया। वह अपने साथ कई ब्राह्मणों को भी ले गया जो यज्ञ के सभी कर्मकाण्डों के अच्छे जानकार थे।[7] राजगीरों और ब्राह्मणों का अलग-अलग उल्लेख ध्यान देने योग्य है। इसी खण्ड में हम पढ़ते हैं, "...फिर सभी कारीगरों और वास्तुकारों ने यज्ञ की सभी तैयारियां करने के बाद इसके बारे में राजा युधिष्ठिर को सूचना दी।" यह मानना पड़ेगा कि इन लोगों को अतिथियों का आवास बनाने का भी आदेश दिया गया था, लेकिन ब्राह्मणों के साथ उनकी यज्ञ के स्थान में उपस्थिति मस्तिष्क और हाथ की एकता प्रकट करती है।

रामायण के बालकाण्ड में भी हमें बताया जाता है कि राजा द्वारा किए जा रहे यज्ञ के सिलसिले में "तब उन्होंने (वशिष्ठ ने) अनुभवी और यज्ञ की क्रिया के अच्छे जानकार ब्राह्मणों से व निर्माण की कला में कुशल लोगों से बातचीत की। उन्होंने कर्मकाण्ड ग्रंथों के भरोसेमन्द कारीगरों, बढ़इयों, खुदाई करने वालों, ज्योतिषियों, कलाकारों, नर्तकों, अभिनेताओं एवं ईमानदार और कर्मकांड ग्रंथों में पारंगत विद्वानों से कहा – सज्जनो, राजा की आज्ञा के अनुसार यज्ञ का काम शुरू करो। तुरन्त कई हज़ार ईंटें लाओ।"[8]

यहां भी आवासों के निर्माण के लिए कारीगरों और शिल्पियों की ज़रूरत पड़ती है। पर सिर्फ यही उनका काम नहीं था। अगले ही खण्ड में हम पढ़ते हैं – "शिल्पियों द्वारा बढ़िया बनाए गए मज़बूत, अष्टकोणी और चिकने स्तंभ कर्मकाण्ड के नियम के अनुसार जगह पर रख दिए गए। ईंटें निर्धारित तरीके और निर्धारित नाप से बनाई गईं। अग्निकुण्ड कर्मकाण्ड की गणना के विज्ञान में कुशल ब्राह्मणों द्वारा निर्मित किया गया।"[9]

कारीगरों-पुरोहितों का सहयोग

इस प्रकार हम शुल्व ग्रंथों को ईंट बनाने वालों, राजगीरों और अन्य कारीगरों तथा पुरोहितों के बीच सहयोग की उपज मान सकते हैं। कारीगरों के शिल्प को आत्मसात करके ही शुल्व विज्ञान (जैसा कि मानव और मैत्रायण शुल्व सूत्र इसे कहते हैं) का जन्म हुआ।[10] ईंटों की ज़रूरत पहले घर बनाने के लिए हुई और उसके बाद ही वे कर्मकाण्ड के लिए इस्तेमाल की गईं। इसका उल्टा नहीं हुआ।

इसलिए हम लॉर्ड रेग्लान के द्वारा प्रस्तावित विचार को खारिज कर देते हैं। हम इस आधार विचार से शुरू करते हैं कि इसके पहले कि समाज कर्मकाण्ड और यज्ञ के बारे में सोच पाता, उसे ज़िन्दा रहने के बारे में सोचना था। "हमें मानव के अस्तित्व, यानी कि पूरे इतिहास के अस्तित्व को सबसे बुनियादी ज़रूरत से शुरू करना चाहिए – इतिहास रचने के लिए सबसे ज़रूरी है कि मनुष्य ज़िंदा रह पाए; और जीवन के लिए और बातों से भी ज़्यादा ज़रूरी है खाना-पीना, रहने के लिए जगह, पहनने के लिए कपड़े और भी ऐसी बहुत-सी बुनियादी ज़रूरतें। इसलिए सबसे पहला ऐतिहासिक कृत्य है इन सब ज़रूरतों की पूर्ति के लिए उत्पाद के तरीके विकसित करना। बेशक यह एक ऐतिहासिक कृत्य है, इतिहास की बुनियादी ज़रूरत, जिसे हज़ारों साल पहले पूरा करना पड़ता था और आज भी मनुष्य के जीवन को बरकरार रखने के लिए प्रतिदिन घंटे-दर-घंटे

पूरा करना ही पड़ता ।''[11]

इसी प्रकार कर्मकाण्डों में प्रयुक्त होने के पहले हल का उपयोग भूमि को जोतने के लिए किया गया होगा। और कर्मकाण्डों में प्रयुक्त होने के पहले धातु के बर्तनों और हथियारों का निर्माण हुआ होगा। हम किसी भी प्रकार इस सरल और स्वयंसिद्ध सत्य मे मुंह नहीं मोड़ सकते, चाहे लॉर्ड रेग्लान और उनके समर्थक हमें ऐसा करने के लिए क्यों न कहें।

मस्तिष्क और हाथ को पहले पेट की ज़रूरत पूरी करनी थी। कर्मकाण्ड भी पर्याप्त भोजन सुनिश्चित करने और प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा देने के लिए बने थे। लेकिन एक खास चरण पर मस्तिष्क और हाथ की एकता खत्म कर दी गई क्योंकि जिन लोगों ने बुनियादी औज़ार और चीज़ों को बनाने का तरीका उपलब्ध कराया था उन्हें शिक्षा से वंचित कर दिया गया। इस दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन ने भारत में विज्ञान और तकनॉलॉजी के ह्रास का मार्ग प्रशस्त कर दिया।[12]

इस समझ के साथ हम अब शुल्व सूत्रों की तरफ बढ़ेंगे।

(क्रमशः)

रामकृष्ण भट्टाचार्य: आनंद मोहन कॉलेज, कलकत्ता के अंग्रेज़ी विभाग में रीडर तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी अध्ययन पाठ्यक्रम में अतिथि लेक्चरर। विज्ञान लेखन में रुचि।
अनुवाद: सुरेश मिश्र। इतिहास के पूर्व प्राध्यापक। एकलव्य में कार्यरत।

फुटनोट एवं संदर्भ ग्रंथ:

1. जी. थिबाट, मेथेमेटिक्स इन द मेकिंग इन इंडिया, कलकत्ता, के. पी. बागची एंड कम्पनी, 1984 में देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय द्वारा लिखी गई भूमिका। पृ. 1 से 16
2. टी. ए. सरस्वती अम्मा, ज्योमेट्री इन एनशियंट एंड मिडिएवल इंडिया, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, 1999। पृ. 16–22
3. थिबाट, नोट 1, पृ. 3
4. एफ. आर. सी. रेग्लान, हाऊ केम सिविलाइज़ेशन?, लंदन, 1949, पृ. 176
5. द शुल्व सूत्र ऑफ कात्यायन, संपादित: गोपाल शास्त्री नेने, बनारस, द चौखंबा संस्कृत सीरिज़ ऑफिस, 1936, पृ. 36 एवं 38
6. द महाभारत, पूना क्रिटिकल एडीशन, आदिपर्वन, केन्टो 47; वलगेट संस्करण, केन्टो 51
7. वही। अश्वमेधिकापर्वण, क्रिटिकल एडीशन, केन्टो 86; वलगेट एडीशन, केन्टो 85
8. द रामायन, बड़ौदा क्रिटिकल एडीशन, बालकांड, केन्टो 12; वलगेट एडीशन, केन्टो 13
9. वही। क्रिटिकल एडीशन, केन्टो 13; वलगेट एडीशन, केन्टो 14
10. द साइंस ऑफ शुल्वा, बी. बी. दत्ता, कलकत्ता, द यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1932, पुन: प्रकाशन 1991, पृ. 8
11. कार्ल मार्क्स एंड फेडरिक एंगेल्स, द जर्मन आयडियोलॉजी, मॉस्को, प्रोग्रेस पब्लिशर्स, 1968, पृ. 39
12. "प्राचीनकाल में लोगों को पता था कि कारीगर यदि अपने सैद्धांतिक और व्यावहारिक ज्ञान को परस्पर नहीं जोड़ेगा तो वह अपने शिल्प की उन्नति नहीं कर पाएगा। इस प्रकार विट्रुवियस और बाद के लेखकों ने वास्तुविद का वर्णन करते हुए कहा है कि उसे 'योजनाकार वास्तुविद और सर्वेक्षणकर्त्ता' होना चाहिए। ऐसे इंजीनियरों को प्रमुख शिल्पकार मानते हुए उनकी ज़रूरत को मान्यता तो मिली थी पर उन्हें शिक्षित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गए। रोमन साम्राज्य के पतन के बाद ऐसे रुझान एकदम बंद हो गए और कारीगरों को खुद शिक्षित होने के लिए छोड़ दिया गया। इस प्रकार दसवीं सदी के बाद वास्तुविद का उल्लेख अक्सर ईंट बनाने वाले के रूप में किया गया। दूसरे शब्दों में वह सिर्फ कारीगरों का उस्ताद था। चौदहवीं सदी में हम वास्तुविद शब्द पाते हैं जिसका उल्लेख बार-बार डिज़ाइनर, योजनाकार और निर्माण कार्य का आयोजन करने वाले के रूप में किया गया है।" ए हिस्ट्री ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी। जिल्द 1, हारमोन्सवर्थ, प्रकाशक: पेंगुइन बुक्स, 1963, पृष्ठ 146